ईकाई 13

छन्द

ईकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

संस्कृत के प्रथम प्रश्नपत्र की इस इकाई में छन्दों का सामान्य परिचय, छन्दों के प्रकार, लक्षण और उदाहारण प्रस्तुत किए जायेंगे। इस इकाई को पढने के बाद आप –

- छन्दों का स्वरूप समझ सकेंगे।
- छन्दों के लिए आवश्यक लघु गुरू मात्रा–नियम और गणों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- विविध छन्दों के लक्षणों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- लक्षण किसी श्लोक पर घटित करके उसका छन्द पहचान सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

संस्कृत के प्रथम प्रश्नपत्र की इस इकाई के माध्यम से आप विभिन्न छन्दों का परिचय प्राप्त कर रहे हैं। गेयता के कारण स्मृति में सुगमता रहती है और इसीलिए पद्य साहित्य का आविर्भाव गद्य साहित्य से पूर्व माना जाता है। वैदिक साहित्य के साथ ही छन्द साहित्य का प्रारम्भ हुआ। वैदिक छन्द और लौकिक छन्दों के स्वरूप के साथ ही उनकी परस्पर भिन्नता का परिचय भी इस इकाई के अध्ययन से आपको प्राप्त हो सकेगा। लौकिक छन्दों के प्रकार, लक्षण और उदाहारण इस इकाई का प्रमुख वर्ण्य विषय है।

13.2 छन्दः परिचय

छन्दःशास्त्र का संक्षिप्त परिचय

संस्कृत साहित्य में काव्य की दो मुख्य विधाएँ हैं – (1) पद्य काव्य और (2) गद्य काव्य। इन दोनों से मिलकर बनी हुई एक तीसरी विधा भी है जिसे चम्पूकाय कहते हैं। यह गद्य–पद्य मिश्रित होती है।

''वाक्यं रसात्मकं काव्यम्'' गद्य काव्य एवं पद्य काव्य दोनों पर काव्य का यह लक्षण लागू होता है। पद्य काव्य के लिए एक और उपादान अनिवार्यतः अपेक्षित रहता है जिसके बिना पद्य काव्य हो ही नहीं सकता, वह है 'छन्द' अर्थात् पद्य काव्य में पूर्वोक्त काव्य गुणों के अतिरिक्त मात्रा, वर्ण संख्या, यति, विराम, लय आदि की भी आवश्यकता रहती है जिसे छन्दोनियम कहते हैं अर्थात् पद्य रचना के लिए छन्दशास्त्र के वर्णामात्रादि विषयक नियमों का पालन करना भी आवश्यक है। पद्य का दूसरा नाम छन्द है और जिस शास्त्र में पद्य रचना के नियम बतलाये गये हैं उसे छन्दःशास्त्र कहते हैं। कहीं–कहीं इसे पिंगल शास्त्र भी कहा गया है, छन्दःशास्त्र का यह नाम उसके प्रधान प्रवर्तक आचार्य 'पिंगल' के नाम से प्रसिद्ध हुआ है।

छन्दः एक परिचय

'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' इस लक्षण के अनुसार जिस वाक्य में रसात्मक प्रतीति हो अर्थात् जिसे सुन कर अथवा पढ़कर आनन्द की प्राप्ति हो अथवा कुछ अलग ही अनुभूति हो उसे काव्य कहते हैं। ऐसे वाक्य में गुणों और अलंकारों का योग उसे और भी हृदयावर्जक (आनन्ददायी) बना देता है।

पद्य रचना की लोकप्रियता के कारण ही छन्दःशास्त्र जैसे नियम ग्रन्थों की रचना अति प्राचीनकाल में ही चुकी थी आज भी एतद्विषयक रचना हो रही है। छन्दःशास्त्र के अति महत्त्वशाली एवं प्राचीन होने के कारण उसकी गणना षड्वेदांगों में की गई है। छन्द शास्त्र को वेद का चरण माना गया है।

13.2.1 उद्भव एवं परम्परा

यद्यपि गद्य और पद्य की रचना का आरम्भ लगभग साथ ही साथ हुआ है, क्योंकि संस्कृत के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदों में ये दोनों ही विधाएँ पाई जाती हैं, तथापि अन्य भाषाओं के साहित्य की भाँति गद्य की अपेक्षा पद्य रचना को ही पूर्ववर्ती माना जाता है, क्योंकि पद्यात्मक रचना के गेय और मधुर होने के कारण, उस युग में, जबकि मुद्रणकला का विकास भी नहीं हुआ था में रचित होकर, कालान्तर तक सुरक्षित रह सकी। इसका कारण पद्य (छन्द) की नियमबद्धता के कारण उन्हें याद रखना सरल है और उनका स्वरूप परिवर्तन नहीं होता।

इस शास्त्र के अन्तर्गत तीन प्रकार के ग्रन्थ हैं – (1) वैदिक छन्दों के निरूपक (2) वैदिक और लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों के निरूपक तथा (3) केवल लौकिक छन्दों के निरूपक ग्रन्थ।

13.2.2 वैदिक छन्द

वैदिक छन्दों से ही लौकिक छन्दों का निर्माण हुआ है। छन्दों का निरूपण करने वाले ग्रन्थों में सबसे प्राचीन ग्रन्थ आचार्य पिंगल कृत छन्दःसूत्र तथा जयदेव कृत छन्दःसूत्र माने जाते हैं। इनमें लौकिक तथा वैदिक दोनों ही प्रकार के छन्दों के नियमों का निर्देश किया गया है। इनमें यास्क, सैतव, काश्यप, माण्डव्य आदि आचार्यों का नामतः उल्लेख किया गया है। छन्दः प्रकरण में इनके उल्लेख से प्रमाणित होता है कि इन छन्दः सूत्रों के पूर्व भी वैदिक छन्दों पर कई ग्रन्थ रहे होंगे तथा इससे यह भी प्रमाणित होता है कि आचार्य पिंगल से यास्क मुनि प्राचीन हैं। अतः स्पष्ट है कि छन्द शास्त्र अति प्राचीन शास्त्र है, जिसे हम प्रतिशाख्यों के समकालीन मान सकते हैं।

'वैदिक छन्दोमीमांसा' के अनुसार छन्दों के आदि प्रर्वतक भगवान् शिव ही थे, इन्हीं से बृहस्पति, इन्द्र, शुक्र, माण्डव्य, सैवत, यास्क मुनि आदि से विकसित एवं परिवर्तित होती हुई यह छन्दोविज्ञान धारा आचार्य पिंगल तक आई है फिर आचार्य पिंगल के द्वारा वैदिक एंव लौकिक छन्दों के लिए नियम निर्धारण किये गये हैं। इस समय अन्य आचार्यों के ग्रन्थों के अभाव में आचार्य पिंगल को ही छन्दःशास्त्र का आदि प्रवर्तक माना जाता है।

वैदिक छन्दों का वर्णन श्रौत सूत्रों प्रतिशाखाओं तथा सर्वानुक्रमणी आदि में तो अवश्य उपलब्ध होता है पर वैदिक छन्दःशास्त्र विषयक कोई ग्रन्थ अब तक उपलब्ध नहीं हो सका है, पर उक्त ग्रन्थों के छन्दोभाग प्रकरण से यह स्पष्ट है कि इस विषय का कोई ग्रन्थ अवश्य रहा होगा जो कि अब नष्ट हो चुका है। आज छन्द के प्रतिपादक ग्रन्थों में सबसे प्राचीन पिंगल का छन्दःसूत्र ही माना जाता है, जिसके रचियता आचार्य पिंगल हैं। इनके अन्य नाम पिंगल नाग, पिंगल मुनि, पिंगलाचार्य आदि भी उपलब्ध होते हैं। इन्हीं नामों के आधार पर विद्वानों ने इनके स्थितिकाल का पता लगाने की चेष्टा की है। बेबर महोदय ने इनको पैंगे ऋषि का वंशज माना है, जिनका उल्लेख शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। षड्गुरू शिष्य ने इनको महर्षि पाणिनी का अनुज बतलाया है। कोलब्रुक महोदय ने पिंगल नाग नाम के आधार पर इनको महाभाष्यकार पंतजलि से अंभिन्न माना है अर्थात् पंतजलि और पिंगल एक ही व्यक्ति थे। पर ये सब विचार काल्पनिक होने से अप्रमाणिक ही हैं, महाभाष्यकार पंतजलि ने स्वयं अपने महाभाष्य में पिंगल आचार्य का उल्लेख किया है, इससे यह सिद्ध है कि पिंगलाचार्य और पंतजलि दोनों भिन्न–भिन्न व्यक्ति हैं और आचार्य पिंगल भगवान् पंतजलि से भी प्राचीन हैं। वस्तुतः आचार्य पिंगल का स्थितिकाल अद्यावधि अज्ञात ही है, केवल इतना ही इस विषय में कहा जा सकता है कि आचार्य पिंगल ई0 पूर्व पांचवें शतक से भी पूर्व में रहे होंगे।

आचार्य पिंगल ने अपने छन्दःसूत्र में जिन वैदिक छन्दों का निर्देश किया है उनका प्रयोग वेदों में उपलब्ध होता है। इसी प्रकार उन्होंने जिन लौकिक छन्दों का प्रयोग किया है वे भी उन्हीं नियमों के अनुसार ई0पू0 प्रथम या द्वितीय शतक में रचित काव्यों में पाये जाते हैं, अतः यह कहा जा सकता है कि आचार्य पिंगल ईसा पूर्व कई शती पहले रहे होंगे। नाट्य–शास्त्र एवं अग्नि, पुराण में उपलब्ध छन्दों का विषय निश्चयतः आचार्य पिंगल से अर्वाचीन है। इनका छन्दःसूत्र आठ अध्यायों में विभक्त है, जिनमें यथास्थान मात्रा तथा गुणों का वर्णन, छन्दों का निरूपण छन्दों के सम, विषम तथा अर्धसम आदि भेद तथा इनके विविध नियमों तथा उपनियमों का वर्णन है। इस ग्रन्थ पर लगभग 15 टीकाएँ हैं।

13.2.3 लौकिक छन्द

लौकिक छन्द प्रायः चार चरणों के होते हैं। इनमें वर्ण और मात्रा के गणना सम्बन्ध नियमों में व्यतिक्रम नहीं होता। परवर्ती शास्त्रों में दिए गए लौकिक छन्दों के लक्षणों को सभी कवियों ने स्वीकार किया है और अपनी रचनाओं में तद्नुरूप प्रयोग किया है।

13.2.4 वैदिक और लौकिक छन्दों की तुलना

यद्यपि लौकिक छन्दों की उत्पत्ति वैदिक छन्दों से ही हुई है, तथापि लौकिक छन्द वैदिक छन्दों से अधिक भिन्न हो गये हैं। वैदिक छन्दों में पादों की रचना अक्षर संख्या पर निर्भर है। उनमें लघु, गुरू, वर्ण तथा गण आदि का विचार नहीं किया जाता जबकि लौकिक छन्दों में ये अनिवार्य हैं, साथ ही प्रत्येक लौकिक छन्द में चार ही पाद होते हैं पर वैदिक छन्दों में त्रिपाद वाले और पंचपाद वाले भी छन्द हैं, अर्थात् वहाँ छन्द के पादों की संख्या न्यूनाधिक भी हो जाती है। वैदिक छन्दों के अक्षरों की संख्या भी सन्धि तोड़कर पूरी कर ली जाती है जहाँ कहीं अक्षर नियमित संख्या में कम पाये जाते हैं जैसे 'वरेण्यम्' में 'वरेणि+यम्' मान लिया जाता है पर लौकिक छन्दों में वर्ण के लिए ऐसा नहीं हो सकता।

वस्तुतः वेद में पाद शब्द का अर्थ सम्पूर्ण छन्द का चतुर्थांश नहीं है, क्योंकि वेद में एकपदा, द्विपदा, त्रिपदा भी ऋचाएँ होती हैं। फिर भी लौकिक छन्दों की उत्पत्ति वैदिक छन्दों से ही हुई है। वैदिक अनुष्टुप् छन्द इसी नाम से लोक में भी आ गया है, इसी को यहाँ श्लोक भी कहा जाने लगा है। वैदिक त्रिष्टुप् छन्द में 11 अक्षर होते हैं। इसी के आधार पर लौकिक 11 अक्षरों वाले इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, उपजाति नामक छन्दों को समझना चाहिए। 12 अक्षरों वाले वैदिक जगति छन्द के आधार पर लौकिक 12 वर्णों के वंशस्थ, द्रुतविलम्बित आदि छन्द बने हैं। इसी प्रकार अन्य वैदिक छन्दों के आधार पर उतनी संख्या वाले वसन्ततिलका, हरिणी, मालिनी, मन्दाक्रांता, शिखरिणी आदि छन्द बने हैं। यद्यपि दोनों में गणनाक्रम में अन्तर है।

13.3 छन्दःशास्त्रपरक ग्रन्थ

छन्दःशास्त्र–प्रवर्तक पिंगलाचार्य के अतिरिक्त उन्हीं के मार्ग का अनुसरण करते हुए कुछ अन्य विद्वानों की भी रचनायें उपलब्ध होती हैं। यह बताया जा चुका है कि पिंगलाचार्य ने वैदिक एवं लौकिक दोनो प्रकार के छन्दों का निर्देश किया था पर इनके उत्तरवर्ती ग्रन्थों में लौकिक छन्दों का ही निर्देश किया गया हैं। 'श्रुतबोध' नाम से प्रसिद्ध एक 43 श्लोकों की छोटी सी पुस्तक उपलब्ध है जिसमें लौकिक प्रसिद्ध छन्दों का बड़ा सरस सुबोध शैली में निर्देश किया गया है इसके रचयिता महाकवि कालिदास को माना जाता है। इसकी विशेषता यह है कि इसके छन्दों के लक्षण ही इसके उदाहारण भी हैं। कवि ने लक्षणों एवं उदाहारणों को पृथक्–पृथक् निर्देश नहीं किया है। अल्पज्ञ छात्रों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। कहा जाता है, और जैसा कि उसके श्लोकान्तर्गत सम्बोधनों एवं विशेषणों से ज्ञात भी होता है कि कालिदास ने इस पुस्तक को अपनी पत्नी को छन्दों का ज्ञान कराने के लिए अति संक्षेप में लिखा था।

13.3.1 पिंगल सूत्र

छन्दशास्त्र के आदि आचार्य पिंगल मुनि माने जाते हैं पिंगल मुनि द्वारा रचित छन्दशास्त्र 'पिंगल सूत्र' नाम से प्रचलित है। इसके आठ अध्याय हैं। इसमें छन्दों का परिचय दिया गया है।

13.3.2 क्षेमेन्द्रकृत सुवृत्ततिलक

कश्मीर के प्रसिद्ध विद्वान् (11 वीं शती) 'क्षेमेन्द्र' ने 'सुवृत्ततिलक' नामक एक पुस्तक छन्द विषयक भी लिखी थी, इस पुस्तक के तीन विन्यासों में उन्होनें प्रायः सभी प्रसिद्ध छन्दों के लक्षण, उदाहारण, गुण–दोष विवेचन तथा इनका विनियोग आदि सभी आवश्यक बातों का निर्देश किया है। विनियोग–प्रकरण में इन्होंने यह बताया है कि कौन–सा छन्द किस प्रसंग में अधिक उपयुक्त है तथा कौन–सा कवि किस छन्द के प्रयोग में सिद्धहस्त है, जैसे कालिदास को इन्होंने मन्दाक्रान्ता नामक छन्द में अधिक कुशल बताया है।

13.3.3 हेमचन्द्रकृत छन्दोऽनुशासनम्

'छन्दोऽनुशासनम्' नामक छन्द विषयक ग्रन्थ के लेखक प्रसिद्ध जैन विद्वान हेमचन्द्र हैं। इनका काव्यानुशासन एक प्रसिद्ध आलंकारिक ग्रन्थ है।

13.3.4 केदारभट्टकृत वृत्तरत्नाकर

श्री केदार भट्ट द्वारा विरचित 'वृत रत्नाकर' नामक छन्दो विषयक उत्तम कोटि का ग्रन्थ है, इसका रचनाकाल 13वाँ शतक माना गया है। इस पर नारायण भट्ट की टीका है। जो कि 16वें शतक की है। ग्रन्थ के अध्यायों में मात्रा, वर्ण, वृत्तों के लक्षण, उदाहरण, सम, अर्धसम, विषम आदि वृत्त तथा प्रस्तार आदि सभी छन्दोविषयक सामग्री उपलब्ध होती है।

13.3.5 गंगादास कृत छन्दोमंजरी

श्री गंगादास (15 वीं शती) विरचित 'छन्दोमंजरी' नामक परम सुबोध छन्दोविषयक ग्रन्थ भी उपलब्ध है। श्री गंगादास जी परमवैष्णव धर्मानुयायी थे अतः उनके छन्दों के उदाहारण राधाकृष्ण की लीलाओं पर ही आधारित है और सभी उदाहारण कवि द्वारा स्वयं रचित हैं। इन उदाहारणों की रचना ललित, मनोहर तथा स्पष्ट हैं। विद्वान् लेखक ने इसके 6 स्तबकों में संज्ञाओं, मात्राओं, वर्णवृत्तों, सम, विषम, अर्धसम आदि सभी प्रकार के वृत्तों के लक्षण उदाहारण दिये हैं। उदाहरणों की यह विशेषता है कि जिस छन्द का वह उदाहारण है, उसी में उस छन्द का नाम भी आ जाता है।

13.4 वर्णमात्रादि विचार –

संस्कृत में छन्दों की रचना का नियामक वर्ण और मात्राएँ हैं, स्वर नहीं। प्रत्येक लौकिक छन्द में चार पाद हों और उसके प्रत्येक पाद में यदि वह समवृत्त है तो नियमित वर्ण ही होंगे और वर्णों में भी लघु–गुरू वर्ण भी नियमानुसार ही होंगे। इसी प्रकार मात्रिक छन्दों में भी ह्रस्व–दीर्घ मात्रायें भी निर्धारित नियमों के अनुसार होंगी। छन्दों में प्रयुक्त वर्ण जो कि नियमानुसार परिगणित होते हैं ह्रस्व या दीर्घ होते हैं, जो वर्ण हलन्त या व्यंजनमात्र अर्थात् स्वर रहित होते हैं, छन्दों में उनकी गणना नहीं की जाती है। सामान्यतः वर्णों के दीर्घ अथवा ह्रस्व होने का विचार उनसे संयुक्त स्वर के दीर्घ या ह्रस्व होने पर निर्भर करता है। यदि व्यंजन वर्ण के साथ संयुक्त स्वर ह्रस्व है तो वर्ण ह्रस्व या लघु माना जायेगा और यदि स्वर दीर्घ है तो वह वर्ण दीर्घ या गुरु माना जायेगा। संस्कृत में अ, इ, उ, ऋ, लृ, ह्रस्व तथा आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ दीर्घ स्वर हैं। इन्हीं के संयोग से वर्ण ह्रस्व या दीर्घ बन जाते हैं। जो वर्ण ह्रस्व या लघु होते हैं वे एक मात्रिक तथा जो दीर्घ या गुरू होते हैं वे द्विमात्रिक कहे जाते हैं, केवल व्यंजन मात्र अर्धमात्रिक होता है अतः छन्दों की वर्ण या मात्रा गणना में वह गृहीत नहीं होता, उसे छोड़ दिया जाता है।

13.4.1 छन्दों में लघु–गुरू मात्रा संबंधी नियम

परन्तु लघु गुरू के इन सामान्य नियमों के अतिरिक्त छन्दों में इस गणना के लिए कुछ विशेष नियम भी हैं जिनका निर्देश निम्नलिखित श्लोक में किया गया है –

संयुक्ताद्यं दीर्घ सानुस्वारं विसर्गसम्मिश्रम्।
विज्ञेयमक्षरं गुरु, पादान्तस्थं विकल्पेन।।

अथवा

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरूर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि वा।।

दोनों श्लोकों का तात्पर्य समान ही है, अर्थात् –

1. संयुक्ताद्यं (वर्णः संयोगपूर्वश्च) – संयुक्त वर्णों से पूर्व का वर्ण यदि ह्रस्व होता है तो वह दीर्घ या गुरू माना जाता है, जैसे 'अनन्त' शब्द में 'न्त' इस संयुक्त वर्ण से पूर्ण अर्थात् 'न' ह्रस्व होने पर भी दीर्घ माना जायेगा। इसी प्रकार निम्नलिखित शब्दों के प्रथम वर्ण दीर्घ माने जायेंगे।

गर्भ, अद्वितीय प्रशस्त, इन्द्र, विद्या, अश्व, विश्रुति।

2. दीर्घ (दीर्घश्च) जो वर्ण दीर्घ स्वर से संयुक्त होगा वह दीर्घ या गुरू माना जायेगा, यथा – वैद्य, वेणु, बोध, मातुल, मया।

3. सानुस्वारं (सानुस्वारश्च) अनुस्वार युक्त ह्रस्व भी वर्ण दीर्घ या गुरू माना जायेगा, यथा–मंगल, नूनं, दंश, विध्वंस आदि।

4. विसर्ग सम्मिश्रम् (विसर्गी) जो वर्ण विसर्ग (:) संयुक्त होगा वह भी ह्रस्व होने पर भी दीर्घ माना जायेगा, यथा – ततः, कृतः, दुःखम्, स्रष्टुः, दृष्टिः, विरामः, देशः आदि।

5. पादान्तस्थं विकल्पेन (पादान्तगोऽपि वा) अर्थात् पाद के अन्त वाला ह्रस्व वर्ण भी यदि आवश्यक हो तो दीर्घ या गुरू मान लिया जाता है यदि दीर्घ मानने की कोई आवश्यकता न हो तो वह ह्रस्व या दीर्घ जैसा भी हो बना रहता है, यथा –

'तदपि तव गुणानातीश पारं न याति'' यह श्लोक का चतुर्थपाद है और यह 'मालिनी' नामक छन्द है। इस छन्द के नियमानुसार इसका अन्तिम वर्ण गुरू होना चाहिए था, पर 'याति' का 'ति' लघु है अतः इसे पादान्त वर्ण होने के कारण दीर्घ मान लिया जायेगा। छन्दःशास्त्र में लघु वर्ण का संकेत 'ल' और गुरू वर्ण का संकेत 'गु' या 'ग' से किया जाता है। 'ल' का चिन्ह (।) और 'गु' का चिह्न (ऽ) है।

13.4.2 मात्रिक छन्द

मात्रिक छन्दों में भी प्रायः लघु गुरू के यही नियम हैं, वहाँ भी संयुक्त वर्ण से पूर्व का वर्ण दीर्घ अर्थात् द्विमात्रिक मान लिया जाता है। मात्रिक छन्दों से ह्रस्व की एक मात्रा और दीर्घ वर्ण की दो मात्रायें गिनी जाती हैं, हलन्त वर्णों को यहाँ छोड़ दिया जाता है। यदि कोई संयुक्त वर्ण आदि में आता है तो वह स्वभावतः ही जैसा उसका स्वर ह्रस्व या दीर्घ होता है वैसा ही माना जाता है, जैसे 'भ्रम' यहाँ 'भ्र' लघु ही माना जायेगा पर 'भ्राता' का 'भ्रा' दीर्घ।

13.4.3 वर्णिक छन्द

मात्रिक छन्दों में मात्राओं की गणना की जाती है वर्णों की नहीं, जबकि वर्ण वृत्तों में लघु गुरू वर्णों की ही गणना की जाती है। मात्रिक छन्दों को 'जाति' भी कहते हैं और जिन छन्दों के पादों में वर्णों की संख्या की समानता रहती है उन्हें वर्णवृत्त कहा जाता है। ये तीन प्रकार के होते हैं समवृत्त और असमवृत्त, विषमवृत्त। जिन छन्दों में चारों चरणों (पादों) में समान लक्षण घटित होते हैं वे समवृत्त कहलाते हैं। जैसे वंशस्थ, स्रग्धरा आदि। जिन छन्दों में अलग–अलग चरणों में भिन्न–भिन्न लक्षण घटित होते हैं वे अर्द्धसमवृत्त कहलाते हैं जैसे अनुष्टुप, उपजाति आदि। जिन छन्दों के चारों चरणों में अलग–अलग लक्षण घटित होते हैं वे विषम वृत्त कहलाते हैं।

13.4.4 गण

वर्ण वृत्तों में गणना की सुविधा के लिए छन्दःशास्त्र में गणों का विधान किया गया है। ये 'गण' संख्या में आठ होते हैं। प्रत्येक गण तीन–तीन अक्षरों का होता हैं। प्रत्येक गण में आने वाले प्रथम, द्वितीय, तृतीय वर्णों में कौन से लघु तथा कौन–से गुरू वर्ण होते हैं, इसके लिए निम्नलिखित श्लोक हैं।

''मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो, भादि गुरूः पुनरादि लघुर्यः।

जो गुरू मध्यगतः, रल मध्यः, सोऽन्त्यगुरूः कथितोऽन्त्य लघुश्च।।

भगण, नगण, मगण, यगण, रगण, तगण, जगण ये आठ होते हैं, इनका स्वरूप प्रस्तुत श्लोक में बताया गया हैं

मास्त्रिगुरूः – अर्थात् मगण के तीनों वर्ण गुरू होते हैं।

त्रिलघुश्च नकारः – अर्थात् नगण के तीनों अक्षर लघु होते हैं।

भादि गुरूः – अर्थात् भगण का प्रथम वर्ण गुरू, शेष लघु होते हैं।

यः आदि लघु – अर्थात् यगण का प्रथम वर्ण लघु शेष दो गुरू होते हैं।

जो गुरूमध्यगतः – अर्थात् जगण का द्वितीय वर्ण गुरू, शेष दो लघु होते हैं।

रलमध्यः – अर्थात् रगण का द्वितीय वर्ण लघु, शेष दो गुरू होते हैं।

सः अन्त्यगुरूः – अर्थात् रगण का द्वितीय वर्ण गुरू, शेष दो लघु होते हैं।

तः अन्त्य लघु – अर्थात् तगण का तृतीय वर्ण लघु, शेष दो गुरू होते हैं।

अर्थात् इनको संक्षेप में इस प्रकार देखा जा सकता है –

(1) य ग ण – ।ऽऽ

(2) म ग ण – ऽऽऽ

(3) त ग ण – ऽऽ।

(4) र ग ण – ऽ।ऽ

(5) ज ग ण – ।ऽ।

(6) भ ग ण – ऽ।।

(7) न ग ण – ।।।

(8) स ग ण – ।।ऽ

गणों के स्वरूप को अति सरलता से याद रखने के लिए

। ऽ ऽ ऽ । ऽ । । । ऽ

''य मा ता रा ज भा न स ल गम्''

यह सूत्र याद रखना चाहिए, इसमें लघु गुरू वर्णों के संकेत सहित आठों गणों के नाम तथा उनके भिन्न–भिन्न स्वरूप निर्दिष्ट कर दिये गये हैं। किसी भी गण के प्रारम्भ से लेकर आगे वाले दो वर्णों के लघु गुरू का ध्यान करने से उस गण को इस सूत्र के माध्यम से जाना जा सकता है जैसे –

	। ऽ ऽ
यगण –	य मा मा
	। । ।
नगण –	न स ल
	ऽ ऽ ऽ
मगण –	मा ता रा

गणों के स्वरूपबोध के लिए यह श्लोक भी द्रष्टव्य है –

आदिमध्यावसानेषु, य रा ता यान्ति लाघवम्।

भ ज सा गौरवं यान्ति, मनौ मु गुरूलाघवम्।।

अर्थात् यगण, रगण और तगण के क्रमशः आदि मध्य और अन्त में लघु वर्ण होते हैं शेष इनके दो–दो गुरू होते हैं, यथा – यगण – । ऽ ऽ, रगण – ऽ । ऽ, तगण – ऽ ऽ ।, इसी प्रकार मगण, जगण और सगण के क्रमशः आदि, मध्य और अन्त में गुरू वर्ण होते हैं, इनके शेष दो–दो वर्ण लघु होते हैं यथा –

भगण – ऽ । ।, जगण – । ऽ ।, सगण – । । ऽ एवं मगण के तीनों वर्ण गुरू तथा नगण के तीनों वर्ण लघु होते हैं यथा – मगण – ऽऽऽ नगण ।।। ।

13.4.5 यति

पद्य का गायन करते समय बीच में कहाँ विश्राम लेना चाहिए, इसके लिए भी छन्द शास्त्र में नियम निर्धारित किये हैं, पाद के अन्त में में तो स्वभावतः विश्राम या रूकना होता ही है, पर एक लम्बे पादों वाले छन्द में पाद के बीच में भी एक बार या दो बार कितने अक्षरों के बाद रूका जाये इसके लिए भी नियम निर्धारित किये गये हैं। इस विश्राम को यति, विराम आदि कहा गया है। मन्दाक्रान्ता आदि बड़े–बड़े छन्दों के लक्षण के बीच ही इस यति का निर्देश कर दिया गया है जैसा कि आगे के वृत्तलक्षणों से स्पष्ट है।

————

ईकाई 14

छन्द

14.0 मात्रिक छन्द

14.1.1 आर्या

लक्षण –

''यस्याः प्रथमे पादे, द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि।

अष्टादश द्वितीये, चतुर्थके पंचदश आर्या।।''

यह आर्या जाति के लक्षण है। इस लक्षण के अनुसार आर्या जाति के प्रथम तथा तृतीय चरणों में 12, 12 मात्रायें। द्वितीय चरण में 18 और चतुर्थ चरण में 15 मात्रायें होंगी। ऊपर लक्षण निर्देश करने वाला पद्य भी आर्या का उदाहारण है तथापि एक दूसरा भी उदाहरण दिया जा रहा है–

सुभग सलिलावगाहा :– 1 + 1 + 1 + 1 + 1 + 2 + 1 + 2 + 2 – 12 मात्रायें

पाटल संसर्गिसुरभिवनवाता :– 2 + 1 + 1 + 2 + 2 + 1 + 1 + 1 + 1 + 1 + 1 + 1 +

2 + 2 – 18 मात्रायें

प्रच्छाय सुलभनिद्रा :– 2 + 2 + 1 + 1 + 1 + 1 + 2 + 2 – 12 मात्रायें

दिवसाः परिणामरमणीया :– 1 + 1 + 2 + 1 + 1 + 2 + 1 + 1 + 2 + 2 – 15 मात्रायें

इसमें लघुवर्ण की 1 तथा गुरू वर्ण की 2 मात्रायें हैं।

14.2 वर्णिक छन्द

14.2.1 अनुष्टुप

इस अनुष्टुप छन्द को श्लोक और पद्य भी कहते हैं। इसका लक्षण है –

"पंचमं लघु सर्वत्र, सप्तमं द्विचतुर्थयोः।

षष्ठं गुरू विजानीयाद् एतत्पद्यस्य लक्षणम्।।"

अर्थात् अनुष्टुप छन्द के चारों चरणों में पंचम वर्ण लघु होता है, द्वितीय और चतुर्थ चारों चरणों का सप्तम वर्ण भी लघु होता है एवं चारों चरणों में षष्ठ वर्ण गुरू होता है। उदाहरण –

1 ऽ | ऽ |

तवास्मि गीततारागेण, हारिणा प्रसभं हृतः।

1 ऽ | ऽ |

एष राजेव दुष्यन्तः सारंगेणातिरंहसा।।

इसके प्रत्येक चरण के पांचवे अक्षर – क्रमशः त, स, व, ति लघु हैं तथा द्वितीय और चतुर्थ चरणों के सप्तम् अक्षर – क्रमशः, हृ, ह भी लघु हैं एवं चारों चरणों के षष्ठ अक्षर – क्रमशः रा, मं, दु, र भी गुरू हैं, अतः यह अनुष्टप् छन्द है।

14.2.2 इन्द्रवज्रा

लक्षण – "स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।।"

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में पहले तगण, फिर एक जगण और अन्त में दो गुरू वर्ण हों और इस प्रकार प्रत्येक चरण में 11–11 वर्ण हों तो उसे इन्द्रवज्रा कहते हैं।

उदाहरण –

नेदं नभोमण्डलमम्बुराशिः।

नैताश्च तारा नवफेनभङ्गाः।।

नायं शशी कुण्डलितः फणीन्द्रो।

नासौ कलङ्कः शयितो मुरारिः।।

तगण	तगण	जगण	गु0गु0
ऽ ऽ ।	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ ऽ
नेदंन	भोमण्ड	लमम्बु	राशिः

लक्षण के अनुसार इसी प्रकार इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः त त ज गु0 गु0 इन गुणों के क्रमों से 11 वर्ण होते हैं।

अथवा – **अर्थो हि कन्या परकीय एव,**

तामद्य संप्रेष्य परिग्रहीतुः।

जातो ममायं विशदः प्रकामं,

प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।।

14.2.3 उपेन्द्रवज्रा

लक्षण – "उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।।"

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में जगण तगण जगण तथा अन्त में दो गुरू वर्ण होते हैं और इस प्रकार कुल 11 वर्ण होते हैं वह उपेन्द्रवज्रा छन्द होता है।

इन्द्रवज्रा का यदि प्रथम वर्ण ह्रस्व हो तो वही उपेन्द्रव्रजा कहा जायेगा – दोनों में इतना ही अन्तर है।

उदाहरण – अलं महीपाल तव श्रमेण

प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्।

न पादपोन्मूलन शक्तिरहः,

शिलोच्चये मूर्च्छति मारूतस्य।।

जगण	तगण	जगण	गु0गु0
। ऽ ।	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ ऽ
अ लं म	ही पा ल	त व श्र	मे ण

उक्त लक्षण के अनुसार इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण अन्त में दो गुरू वर्णों के क्रम से 11 वर्ण हैं। पाद के अन्त में होने के कारण 'ण' को गुरू माना गया है।

अथवा – त्वमेव माता च पिता त्वमेव,

त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,

त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

14.2.4 उपजातिः

लक्षण – "अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ, पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।।"

अर्थात् जिन छन्दों में समानान्तर उक्त स्वरूप वाले छन्द सम्मिश्रित हों उनमें उपजाति नामक छन्द होता है।

जाति का अर्थ यहाँ छन्द है अतः उपजाति का अर्थ मिश्रित छन्द। यद्यपि इन्द्रवज्रा एवं उपेन्द्रवज्रा के मिश्रित रूप को उपजाति कहा गया है, तथापि इसी प्रकार के अन्य छन्दों के मिश्रित को भी उपजाति कह सकते हैं।

इस उपजाति छन्द में दोनों का मिश्रण रूप कई प्रकार से हो सकता है, चाहे एक चरण इन्द्रवज्रा का और शेष उपेन्द्रवज्रा के हों, अथवा दो–दो चरण दोनों के हों अथवा तीन इन्द्रवज्रा के और एक उपेन्द्रवज्रा का हो, प्रत्येक स्थिति में उपजाति छन्द की कहा जायेगा।

उदाहरण – शमप्रधानेषु तपोधनेषु,

गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः।

स्पर्शानुकूला अपि चन्द्रकान्ता,

स्तदन्यतेजोऽभिभवाद् वमन्ति।।

जगण	**तगण**	**जगण**	**गु0**	**गु0**
। ऽ ।	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ	ऽ
शमप्र	**धानेषु**	**तपोध**	**ने**	**षु – उपेन्द्रवज्रा**
तगण	**तगण**	**जगण**	**गु0**	**गु0**
ऽ ऽ ।	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ	ऽ
गूढंहि	**दा हात्म**	**क म स्ति**	**ते जः – इन्द्रवज्रा**	

इसके प्रथम चरण में उपेन्द्रवज्रा है तथा द्वितीय में इन्द्रवज्रा, उसी प्रकार तृतीय चरण में इन्द्रवज्रा और चतुर्थ में उपेन्द्रवज्रा है अतएव यह उपजाति छन्द है। प्रथम चरण का अन्तिम 'षु' पादान्त होने में गुरू है।

अथवा – **अथ प्रजानामधिपः प्रभाते,**

जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्यां।

वनाय पीतप्रतिवद्धवत्सां,

यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोचा।।

इसके बाद भी द्वितीय पाद में इन्द्रवज्रा है, शेष तीनों चरणों में उपेन्द्रवज्रा है अतः उपजाति है।

14.2.5 वंशस्थ (वंशस्थविल)

लक्षण – ''जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।''

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण, रगण के क्रम से 12 वर्ण हों वह वंशस्थ छन्द कहलाता है।

उदाहरण – **भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः,**

नवाम्बुभिर्भूमिविलम्बिनो घनाः।

अनुद्धताः सत्पुरूषाः समृद्धिभिः,

स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्।।

जगण	**तगण**	**जगण**	**रगण**
। ऽ ।	ऽ ऽ ।	। ऽ ।	ऽ । ऽ
भ व न्ति	**म्रा स्त र**	**वः फ लो**	**द् ग मैः।**

इसी प्रकार इसके चारों ही चरणों में ज, त, ज, र, गणों के अनुसार 12 वर्ण होंगे।

अथवा – **इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः,**

तपः क्षमं साधयितुं यः इच्छति।

ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया,

शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति।।

14.2.6 वसन्ततिलका

लक्षण – ''ज्ञेया वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।''

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में क्रमशः तगण, भगण, जगण, जगण तथा अन्त में दो गुरू वर्ण हों और इस प्रकार प्रत्येक चरण में 14 वर्ण हों तो वह बसन्ततिलका छन्द होता है।

त	भ	ज	ज	गु	गु
ऽ ऽ।	ऽ ।।	। ऽ ।	। ऽ।	ऽ	ऽ
चित्रेन	वेश्यप	रिकल्पि	तसत्व	योगा	

उदाहरण – **चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्वयोगा**
रूपोच्चयेन विधिना मनसा कृता नु।
स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा प्रतिभाति सा मे,
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः।।

इसी प्रकार शेष तीनों में भी क्रमशः त, भ, ज, ज तथा अन्त में दो गुरू वर्ण होने के कारण बसन्ततिलका है।

अथवा – **रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्यशब्दान्,**
पर्युत्सुकी भवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वं,
भावस्थिराणि जननान्तरसौहृदानि।।

14.2.7 मालिनी

लक्षण – ''ननुमययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।।'

अर्थात् जिस छन्द में चारों चरणों में क्रमशः प्रत्येक चरण के आठवें अक्षर एवं सातवें पर यति होती है, तथा प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, नगण, मगण, यगण, यगण के क्रम से 15 वर्ण हों वह मालिनी नामक छन्द कहलाता है।

उदाहरण– **सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं,**
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी,
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।

नगण	नगण	मगण	यगण	यगण
। । ।	। । ।	ऽ ऽ ऽ	। ऽ ऽ	। ऽ ऽ
सरसि	जमनु	विद्वंशी	वलेना	पिरम्यं

इसी प्रकार इसके शेष तीन चरणों में भी न, न, म, य, य के क्रम से 15 वर्ण होने से मालिनी छन्द है।

अथवा– **स्वसुखनिरभिलाषः खिद्यसे लोकहेतोः,**
प्रतिदिनमथवा ते वृत्तिरेवम्विधैव
अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णं,
शमयति परितापं छायया संश्रितानाम्।।

14.2.8 शिखरिणी

लक्षण – ''रसै रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी।''

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण और अन्त में एक लघु तथा दूसरा गुरू वर्ण हो तथा प्रत्येक चरण के षष्ठ एवं एकादश अक्षरों पर यति हो और इस प्रकार कुल 17 वर्ण हो वह शिखरिणी छन्द होता है।

उदाहरण – **महाभागः कामं नरपतिरभिन्नस्थितिरसौ,**
न कश्चिद् वर्णानामपथमपकृष्टोऽपि भजते।
तथापीदं शश्वत् परिचितविविक्तेन मनसा,
जनाकीर्णं मन्ये, हुतवहपरीतं गृहमिव।।

यगण	मगण	नगण	सगण	भगण	ल0	गु0
।।।	ऽऽऽ	।।।	।।ऽ	ऽ।।	।	ऽ
महाभा	गःकामं	नरप	तिरभि	न्नस्थिति	र	सौ

इसी प्रकार इसके शेष तीन चरणों में क्रमशः य, म, न, स, भ और अन्त में दो क्रमशः ल0गु0 होने से यह शिखरिणी छन्द है।

अथवा– **चलापाङ्गां दृष्टिं स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीं,**
रहस्याख्यायीव, स्वनसि मृदु कर्णान्तिकचरः।
करौ व्याधुन्वत्याः, पिबसि रतिसर्वस्वमधरं,
वयं तत्त्वान्वेषान्धुकर हतास्त्वं खलु कृती

14.2.9 मन्दाक्रान्ता

लक्षण – ''मन्दाक्रांताम्बुधिरसनगैर्मोभनौ तौ गयुग्मम्।''

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में क्रमशः मगण, भगण, नगण, तगण, तगण और अन्त में दो गुरू वर्ण हो एवं 4, 6, 7 वर्णों पर यति हो, और इस प्रकार कुल 17 वर्ण हो वह मन्दक्रान्ता छन्द होता है।

उदाहरण – **अध्याक्रांता वसतिरमुनाप्याश्रमे सर्वभोग्ये,**
रक्षायोगादयमपि तपः प्रत्यहं संचिनोति
अस्यापि द्यां स्पृशति वशिनश्चारणद्वन्द्वगीतिः,
पुण्यः शब्दो मुनिरिति मुहुः केवलं राजपूर्वः।।

मगण	भगण	नगण	तगण	तगण	गु0 गु0
ऽऽऽ	ऽ।।	।।।	ऽऽ।	ऽ ऽ।	ऽ ऽ
अध्याक्रा	न्तावसा	तिरमु	नाप्याश्र	मेसर्व	भोग्ये

इसी प्रकार इसके शेष तीन चरणों में भी म, भ, न, त, त तथा अन्त में दो गुरू वर्णों के होने से यह मन्दक्रान्ता छन्द कहलाता है।

अथवा– **नैतच्चित्रं यदयमुदधि श्यामसीमां धारित्री –**
मेकः कृत्स्नां नगरपरिधिप्रांशुबाहुर्भुनक्ति।

आशंसन्ते सुरयुवतयो बद्धवैरा हि दैत्ये,
रस्याधिज्ये धनुषि विजयं पौरहूते च वज्रे।।

14.2.10 शार्दूलविक्रीडित

लक्षण – "सूर्यांश्वैर्मसजस्ततः सगुरव शार्दूल विक्रीडितम्।" अथवा
सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूल विक्रीडितम्।

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में क्रमशः मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और अन्त में एक वर्ण गुरू होता है तथा 12 एवं 7 पर यति होती है, वह शार्दूलविक्रीडित छन्द कहा जाता है।

उदाहरण – पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं, युष्मास्वपीतेषु या,
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां, स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये, यस्या भवत्युत्सवः,
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वेरनुज्ञायताम्।।

मगण	सगण	जगण	सगण	तगण	तगण	गु0
SSS	।।S	।S।	।। S	SS।	SS।	S

पा तु न प्रथ मं व्य व स्य ति ज लं युष्मा स्व पी ते षु या

इसी प्रकार इसके शेष तीन चरणों में क्रमशः म, स0 ज0 स0 त0 त0 तथा अन्त में एक गुरू वर्ण होने से यह शार्दूल विक्रीडित छन्द है।

अथवा– अस्या सर्गविधौ प्रजापतिभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः,
श्रृंगारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो, वसन्तो नु वा।
वेदाभ्यासजडः कथन्नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो,
निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।

14.2.11 स्रग्धरा

लक्षण – "म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।"

अर्थात् जिस छन्द के चारों चरणों में क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, यगण, यगण के क्रम में 21 वर्ण होते हैं तथा 7 वर्णों पर यति हो, उसे स्रग्धरा कहते हैं।

उदाहरण – ग्रीवाभंगाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः,
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा,
पश्यादग्रप्लुत त्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति।।

मगण	रगण	भगण	नगण	यगण	यगण	यगण
SSS	S।S	S।।	।।।	।SS	SSS	।SS
ग्रीवाभ	**गां भि रा**	**म मु हु**	**र नु प**	**त ति स्य**	**न्द ने ब**	**द्ध दृ ष्टिः**

इसी प्रकार इसके शेष तीन चरणों में क्रमशः म0र0भ0न0 य0 य0 य0 के क्रम से 21 वर्ण हैं अतः यह स्रग्धरा छन्द है।

अथवा– या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति, विधिहुतं, या हविर्या च होत्री,

ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा, या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया, प्राणिनः प्राणवन्तः,
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः।।

14.3 सारांश

यति, गति के नियमों से निश्चित पद्य/श्लोक ही छन्द कहलाते हैं। लघु और गुरू मात्राओं के आधार पर, वर्ण और गणों के माध्यम से इनकी लय निर्धारित होती है। इन नियमों के कारण ही छन्द याद रखने में सुगम और गाए जाने योग्य होते हैं। यद्यपि 'रसात्मक वाक्य' ही काव्य माना गया है, किन्तु छन्दोबद्ध (पद्य) काव्य अपनी लय, गति गेयता के कारण सुग्राह्य भी होता है और उसे याद रखना भी अधिक सरल होता है।

14.4 शब्दावली

जाति – मात्रिक छन्दों को जाति कहा जाता है जैसे आर्या जाति।

वृत्त – वर्णित छन्दों को वृत्त कहा जाता है।

पाद–चरण – छन्द के चतुर्थांश को पाद या चरण कहा जाता है।

समवृत्त जिस छन्द के चारों चरणों में समान लक्षण घटित हों जैसे वंशस्थ।

अर्द्धसमवृत्त – जिसके प्रथम व तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरणों में समानता होती है जैसे पुष्पिताग्रा।

विषमवृत्त – जिसके सभी चरण भिन्न–भिन्न होते हैं।

लघु मात्रा (।) – जिसका उच्चारण एक सांस में किया जा सके – अ, ई, उ, ऋ, लृ

दीर्घ मात्रा (ऽ) – जिसके उच्चारण में लघु या दुगना समय लगे।

14.5 बोध प्रश्न

1. समवृत्त किसे कहते हैं ?

____

____

____

____

2. जाति किसे कहते हैं ? उदाहरणपूर्वक समझाइए।

____

____

____

____